भगवानजी केरी रामतडी, जोयानी हुती मूंने खांत जी।
नौतनपुरी मांहें आवी करीने, मूने चींधी देखाड्यो द्रष्टांत जी।। ३ ।।

अक्षर भगवान के खेल देखने की हमें चाहना थी। नौतनपुरी में आकर के दृष्टान्त देकर आडीका (चमत्कारिक) लीला करके दिखाई।

श्री धामतणा सुख केणी पेरे कहूं, जे तारतमे करी तमे दीधां जी।
नौतनपुरीमां मनोरथ कीधां, ते विध विधना मारा सीधां जी।। ४ ।।

परमधाम के सुखों का कैसे वर्णन करूं? इसे आपने तारतम वाणी से दिया। जो इच्छाएं कीं वह सभी तरह से नौतनपुरी में पूरी कीं।

सेहेजल सुखमां झीलतां, दुख न जाणिए कांई जी।
दुस्तर जल सुपनमां देखी, हूं जांणी ते घरनी बडाई जी।। ५ ।।

परमधाम में हम सदा ही सुख में रहते थे। दुःख क्या होता है, नहीं जानते थे। उन कठिन दुःखों को सपने के ब्रह्माण्ड में देखा। तब घर के सुखों की लज्जत का पता चला।

इंद्रावती कहे अति उछरंगे, तमे लाड अमारा घणा पाल्या जी।
निरमल नेत्र करी जीवना, तमे पडदा पाछा टाल्या जी।। ६ ।।

श्री इन्द्रावतीजी उमंग के साथ कहती हैं कि मेरे धनी! आपने हमें बहुत लाड लडाए तथा हमारे जीव के नेत्र निर्मल करके माया का परदा (अज्ञान के परदे को) हटा दिया।

आपोपूं ओलखावी करीने, पोताने पासे तेडी लीधी जी।
इंद्रावती ने एकान्त सुख दीधां, आप सरीखडी कीधी जी।। ७ ।।

आपने अपनी पहचान कराकर अपने पास बुला लिया और श्री इन्द्रावतीजी को अपने समान करके एकान्त में अधिक सुख दिए।

॥ प्रकरण ॥ ३६ ॥ चौपाई ॥ १०३७ ॥

प्रगट वाणी

हवे सैयरने हूं प्रगट कहूं, आपणों वास श्री धाममां रहूं।
अछरातीत ते आपणा घर, मूल वैकुंठ मांहें अछर।। १ ।।

अब सुन्दरसाथ को मैं कहती हूं कि अपने रहने का ठिकाना श्री परमधाम है। अक्षरातीत अपना घर है। मूल बैकुण्ठ अक्षर के हृदय में है (बैकुण्ठ का मूल अक्षर में है)।

ए वाणी चित धरजो ब्सथ, दया करी कहे प्राणनाथ।
ए किव करी रखे जाणो मन, श्री धणी लाव्या धामथी वचन।। २ ।।

इस वाणी को सुन्दरसाथ चित्त में धरना। बड़ी कृपा करके अपने प्राणनाथ कह रहे हैं। यह नहीं समझ लेना कि यह वाणी कविता करके लिखी गई है। यह वचन तो धाम धनी परमधाम से लाए हैं।

ते तमने कहूं प्रगट करी, मूल वचन लेजो चित धरी।
हवे तारतम जो जो प्रकास, तिमर मूलथी करूं नास।। ३ ।।

इसको मैं प्रकट करके कहती हूं। अपने इन मूल के वचनों को चित्त में धर लेना। अब तारतम वाणी के उजाले को देखो। जिससे अन्धकार का (अज्ञानता का) मूल से ही नाश कर देती हूं।

Nijanand App

हवे तमने कहूं मूलज थकी, अने मोह अहंकार कांई उपनूं नथी।
न कांई ईश्वर न मूल प्रकृती, तेणें समे आपणमां वीती।।४।।

अब तुमको मूल से बताती हूं। जब मोह और अहंकार उत्पन्न नहीं था, न नारायण थे और न मूल प्रकृति थी, उस समय जो अपने पर बीती थी, उस घटना को कहती हूं।

एणे समे मूल वैकुंठ नाथ, इछा दरसन करवा साथ।
साथ तणें मन मनोरथ एह, माया रामत जोइए तेह।।५।।

इस समय मूल बैकुण्ठनाथ अक्षर को सुन्दरसाथ के दर्शन करने की इच्छा हुई। सुन्दरसाथ के मन में माया का खेल देखने की इच्छा हुई।

ए वात अमे श्री राज ने कही, त्यारे अम बेहू पर इछा थई।
उपनूं मोह सुरत संचरी, तेणे माया रचना करी।।६।।

यह बात हम दोनों ने श्री राजजी से कही। तब हम दोनों में आज्ञा की इच्छा प्रकट हुई। मोह सागर बना और हमारी आत्माओं ने इसके अन्दर प्रवेश किया। मोह सागर की रचना माया ने की।

आहीं अछरनूं विलस्यो मन, पांच तत्व चौद भवन।
एमां विष्णु मन बीजो मननो विलास, रच्यो एह स्वांस नो स्वांस।।७।।

यहां अक्षर के मन से पांच तत्व और चौदह लोकों का ब्रह्माण्ड बना। इसमें भगवान विष्णु अव्याकृत के मन के स्वरूप हैं, जिनकी सांसों से ब्रह्माण्ड बना।

एमां वासना आवी अम तणी, मन इछे पोतानू धणी।
अछर वासना लई आवेस, नंद घेर कीधो प्रवेस।।८।।

इस ब्रह्माण्ड में हमारी आत्माएं आईं और अपने धनी से मिलने की इच्छा करने लगीं। अक्षर की आत्मा ने धनी के आवेश को लेकर नन्द के घर में प्रवेश किया।

साथ सुपन एम दीठूं सही, जे गोकुल रमयां भेला थई।
बेहू सुरत रमियां कई भांत, मन वांछित करी खरी खांत।।९।।

सुन्दरसाथ ने इस तरह से स्वप्न को देखा। गोकुल में हम दोनों मिलकर खेले। हम दोनों की सुरताओं ने (अक्षर व ब्रह्मसृष्टि ने) मन में चाही हुई इच्छाओं को तरह-तरह के खेल करके पूरा किया।

अग्यार वरस लगे लीला करी, कालमाया इहांज परहरी।
जोगमाया करी रमिया रास, आनंद मन आंणी उलास।।१०।।

ग्यारह वर्ष तक लीला करके कालमाया के ब्रह्माण्ड को छोड़ दिया। योगमाया का ब्रह्माण्ड नया रचकर आनन्द और उल्लास के साथ रास खेली।

रास रमी घेर आव्या एह, साथ सकलमां अधिक सनेह।
तामसी उत्कंठा रही मन सार, तो आपण आव्या बीजी वार।।११।।

रास खेलकर घर आए (परम धाम)। उस समय सुन्दरसाथ में बहुत प्यार था। तामसी सखियों के मन में कुछ इच्छा रह गई थी, इसलिए अब हम दूसरी बार आए हैं।

Nijanand App

मारकंडे माया दीठी जेम, घेर बेठा आपण जोइए तेम।
ते माया सुकजीए वरणव करी, त्रण अध्याय कह्या चित धरी।। १२ ।।

मार्कण्डेय ऋषि ने जिस प्रकार माया देखी थी, घर में बैठकर आपने भी इसी प्रकार खेल देखा। इस माया का शुकदेवजी ने तीन अध्यायों में वर्णन किया। (बारहवें स्कन्ध अध्याय ९, श्लोक ८-९-१० में है)।

हवे प्रीछजो ए द्रष्टांत, एणे पण मांगी करी खांत।
जुओ मायानो वृतांत, रिखि केमे न पाम्यो स्वांत।। १३ ।।

हे साथजी! अब इस दृष्टान्त से समझो। जैसी चाहना मार्कण्डेय ने की थी वैसी ही हमने की। माया की हकीकत देखी। ऋषि ने इसमें किसी तरह की शान्ति नहीं पाई।

ततखिण कम्पमानज थयो, माया मांहें भलीने गयो।
कल्पांत सात ने छियासी जुग, माया आडी आवी बुध।। १४ ।।

ऋषि तुरन्त ही कांपने लगे और माया में मिल गए। सात कल्पान्त और छियासी युग तक माया का आवरण उनकी बुद्धि पर रहा।

नहीं तो नथी थई अधखिण वार, मारकंड दुख पाम्यो अपार।
त्यारे मांहें नारायणजी कीधो प्रवेस, देखाडी माया लवलेस।। १५ ।।

नहीं तो आधे क्षण का भी समय नहीं हुआ था, जिसमें मार्कण्डेय ने अपार दुःख देखा। तब नारायण जी ने माया में प्रवेश किया और थोड़ी सी माया दिखाकर सावचेत किया।

जुए जागी तां तेहज ताल, दया करी काढ्यो तत्काल।
मायानी तां एह सनंध, निरमल नेत्रे थइए अंध।। १६ ।।

जागकर मार्कण्डेय ने देखा कि वही घड़ी है और वही तालाब है। दया करके नारायण ने उनको तत्काल निकाला। माया की यह हकीकत है कि सामने देखकर भी अन्धे हो जाते हैं।

एणी पेरे अमने रह्यो अंदेस, ते राखे नहीं धणी लवलेस।
ते माटे वली आ सुपन, इछाए कीधूं उतपन।। १७ ।।

इस प्रकार से हमको संदेह रह गया था, संदेह को धनी थोड़ा भी नहीं रहने देंगे। इस वास्ते फिर से इच्छाओं की पूर्ति के लिए संसार बनाया।

अखंड थयो कालमाया तणों, अंदेस भाजवाने आपणो।
केटलीकने उत्कंठा रही, ते माटे सर्वने आगना थई।। १८ ।।

अपना संदेह मिटाने के लिए कालमाया का पहला ब्रह्माण्ड अखण्ड किया। बहुत सी चाहना बाकी रह गई थी, इस वास्ते राजजी की आज्ञा सभी पर हुई।

ब्रह्मांड मांहें आवियो एह, मन तणां भाजवा संदेह।
साथ मांहें एक सुंदरबाई, तेणे श्री राजे दीधी बडाई।। १९ ।।

हम इस तीसरे ब्रह्माण्ड में अपना संदेह मिटाने के लिए आए। सुन्दरसाथ के बीच में सुन्दरबाई को श्री राजजी ने बड़ा मान दिया।

आवेस अंग आपी आधार, दई तारतम उघाड्या बार।
घर थकी वचन लई आव्या, ते तां सुंदरबाईने कह्या।। २० ।।

श्री राजजी ने उनके अन्दर अपना आवेश दिया और तारतम का ज्ञान देकर घर के दरवाजे खोले। श्री राजजी ने सुन्दरबाई से कहा कि यह तारतम के वचन मैं घर से लाया हूं।

Nijanand App

साथ वचन सांभलिया एह, वासनाए कीधां मूल सनेह।
ते मांहें एक इंद्रावती, केहेवाणी सहुमां महामती।। २१ ।।

सुन्दरसाथ ने इन वचनों को सुना और आत्माओं ने परमधाम की तरह आपस में प्यार किया। उनमें श्री इन्द्रावतीजी ही महामति कहलाईं।

तारतम अंग थयो विस्तार, उदर आव्या बुध अवतार।
इछा दया ने आवेस, एणे अंग कीधो प्रवेस।। २२ ।।

इनके अंग में तारतम का विस्तार हुआ और बुधजी हृदय में विराजमान हुए। दया और आवेश ने श्री इन्द्रावतीजी के अंग में प्रवेश किया।

एणी पेरे भाज्यो संदेह, समझ्या सहुए वातज एह।
वचन विस्तरिया विवेक, तेणे मली रस थयो एक।। २३ ।।

इस प्रकार से संशय मिटाया और इस बात से सबको समझाया। इस वाणी का विवेक से विस्तार किया, जिससे सब मिलकर एक रस हो गए।

साथ मल्योने थई जागणी, हरख्यो साथने रमियां धणी।
ए चारे लीला कीधी सही, पण जागनी तो अति मोटी थई।। २४ ।।

सब सुन्दरसाथ इकट्ठे हुए। सब सुन्दरसाथ धनी के साथ आनन्द से मिलकर खेले। इस प्रकार चारों लीलाएं कीं ब्रज रास (नौतनपुरी-देवचन्द्रजी की) तथा प्राणनाथजी की (पन्नाजी की) लीला की, परन्तु जागनी का काम तो बहुत बड़ा है।

इहां साथने थयो उलास, कह्यो न जाय तेह विलास।
ए जागणीना सुख केणी पेरे कहिए, जाणे श्री धाममां बेठा छैए।। २५ ।।

यहां सुन्दरसाथ में बड़ा उल्लास हुआ, जिसके आनन्द को कहा नहीं जा सकता। इस जागनी के सुख को किस तरह से कहें जिससे ऐसा अनुभव हो जाए कि हम धाम में बैठे हैं।

मली साथ वातो हरखे करी, जेवी रामत जेणे चित धरी।
एम करता द्रष्टे आव्यूं धाम, केहेना मनमां रही न हाम।। २६ ।।

सुन्दरसाथ बड़े हर्ष से मिलकर अपनी-अपनी इच्छानुसार रामत देखकर खुशी से बातें करेंगे। इस तरह से परमधाम नजर में आएगा। किसी के मन में किसी प्रकार की इच्छा बाकी न रहेगी।

पछे साथ उठीने बेठा थया, एह वचन आगलथी कह्या।
इंद्रावती कहे उठसे अछर, लई आनन्द पोताने घर।। २७ ।।

इसके बाद सब सुन्दरसाथ उठकर जागृत होकर बैठ जाएंगे (मूल मिलावा में)। इस होने वाली लीला को मैंने पहले से ही कह दिया है। श्री इन्द्रावतीजी कहती हैं कि इसके बाद आनन्द लेकर अक्षर अक्षरधाम में जागृत होंगे।

।। प्रकरण ।। ३७ ।। चौपाई ।। १०६४ ।।

प्रकरण तथा चौपाइयों का पूरा संकलन ।। प्रकरण ।। ८४ ।। चौपाई ।।१९७७।।

।। प्रकास गुजराती जंबूर सम्पूर्ण ।।

Nijanand App